अंक–2

अगस्त – 2018

स्वास्थ्य समाचार पत्रिका

आयुर्वेद, बी.एच.यू.

मासिक पत्रिका

(वर्ष – 02 अंक – 02)

न त्वहं कामये राज्यं न स्वर्ग नाऽपुनर्भवम्।
कामये दु:खतप्तानां प्राणिनामार्तिनाशनम्।।

ॐ पूर्णमद: पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ।।

स्वस्थस्य स्वास्थ्यरक्षणमातुरस्य विकार प्रशमनं च ।।

संरक्षक – प्रो0 विजय कुमार शुक्ल, निदेशक, चि0वि0सं0, बी0एच0यू0
(directorims@gmail.com)

प्रधान संपादक –
प्रो0 यामिनी भूषण त्रिपाठी, संकाय प्रमुख, आयुर्वेद संकाय,
बी0एच0यू0 (yaminiok@yahoo.com)

संपादक – वैद्य सुशील कुमार दूबे,
सहायक आचार्य, क्रिया शारीर विभाग, आयुर्वेद संकाय, बी0एच0यू0,
(drsushildubey@gmail.com),
Mob.No.- 9415540732, 8423270165

सह–संपादक –

- डॉ0 नम्रता जोशी, सह–आचार्य, रसशास्त्र विभाग, आयुर्वेद संकाय, बी0एच0यू0, (drnamratajoshi@gmail.com)
- डॉ0 नरेन्द्र शंकर त्रिपाठी, सहायक आचार्य, क्रिया शारीर विभाग, आयुर्वेद संकाय, बी0एच0यू0 (drnstripathiksbhu@gmail.com)
- डॉ0 सुदामा यादव, सहायक आचार्य, संहिता व संस्कृति विभाग, आयुर्वेद संकाय, बी0एच0यू0 (drssyadav11@gmail.com)
- डॉ0 प्रेम शंकर उपाध्याय, सहायक आचार्य, कौमारभृत्य विभाग, आयुर्वेद संकाय, बी0एच0यू0 (psupadhyay08@gmail.com)
- डॉ0 वन्दना वर्मा, सहायक आचार्य, क्रिया शारीर विभाग, आयुर्वेद संकाय, बी0एच0यू0, (vandana.verma04@gmail.com)
- डॉ0 अनुराग पाण्डेय, सहायक आचार्य, विकृति विज्ञान विभाग, आयुर्वेद संकाय, बी0एच0यू0 (dr.anubhu@gmail.com)
- डॉ0 दिनेश मीना, सहायक आचार्य, सिद्धान्त दर्शन विभाग, आयुर्वेद संकाय, बी0एच0यू0 (dinesh4ubhu@gmail.com)
- डॉ0 रश्मि गुप्ता, सहायक आचार्य, शल्य तन्त्र विभाग, आयुर्वेदसंकाय,बी0एच0यू0 (drrashmiguptabhu@gmail.com)
- डॉ0 ममता तिवारी, सहायक आचार्य, स्वस्थवृत्त एवं योग विभाग, आयुर्वेद संकाय, बी0एच0यू0 (mamtat6@gmail.com)

राष्ट्रीय सलाहकार समिति –

- प्रो0 एच0एच0 अवस्थी, आचार्य, रचना शारीर विभाग आयुर्वेद संकाय, चिकित्सा विज्ञान संस्थान, बी.एच.यू., वाराणसी (hhawasthi10@yahoo.co.in)
- डॉ0 मनदीप गोयल, सह–आचार्य, कायचिकित्सा विभाग, आई0पी0जी0टी0आर0ए0, जामनगर, गुजरात (kaurmandip22@yahoo.com)
- प्रो0 संजय कुमार गुप्ता, आचार्य, शल्य तन्त्र विभाग, ऑल इण्डिया इन्स्टीट्यूट ऑफ आयुर्वेद, नई दिल्ली, (drskgupta17@gmail.com)
- वैद्य पवन कुमार रमेश गोदतवार, आचार्य, विकृति विज्ञान विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर, (pgodatwar@gmail.com)
- डॉ0 नन्दकिशोर दाधीच, सह–आचार्य, क्रिया शारीर विभाग, उत्तराखण्ड आयुर्वेद विश्वविद्यालय, देहरादून, (dadhichnand@gmail.com)
- डॉ0 योगेश कुमार पाण्डेय, सह– आचार्य, कायचिकित्सा विभाग, सी0बी0पी0ए0सी0एस0, नई दिल्ली, (dryogeshpandey@gmail.com)
- डॉ0 महेश नारायण गुप्ता, रीडर, कौमारभृत्य विभाग, स्टेट आयुर्वेदिक कॉलेज, टुड़ियागंज, लखनऊ, (mngupta75@yahoo.com)

सम्पादन सचिव –

- श्रीमती चन्दा श्रीवास्तव, आयुर्वेद संकाय, बी0एच0यू0, (chandabhu1976@gmail.com)
- श्री सुनील दूबे, आयुर्वेद संकाय, बी0एच0यू0, (dsunil.jyoti@gmail.com)

-:कार्यालयः-

धनवन्तरी भवन

आयुर्वेद संकाय, चिकित्सा विज्ञान संस्थान

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय-२२१००५

सम्पादकीय

प्रिय पाठकों, सहृदय धन्यवाद

आप हमारी स्वास्थ्य समाचार पत्रिका को पढ़कर लाभान्वित हो रहे हैं ऐसी मैं अपेक्षा करता हूँ, साथ ही बाबा विश्वनाथ एवं माँ अन्नपूर्णा के आशीर्वाद से आपको हमारे पत्रिका द्वारा स्वास्थ्य लाभ मिलता रहे, यही कामना करता हूँ।

संकाय प्रमुख, आचार्य यामिनी भूषण त्रिपाठी कर्मठ, विद्वान, कुशल नेतृत्व के धनी एवं उनके सद्प्रयासों द्वारा संकाय की उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है जिसको हम इस पत्रिका के माध्यम से आप लोगों तक पहुंचाते रहेंगे। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के वेब पेज पर निम्न लिंक www.bhu.ac.in/research pub/swaasthya-patrika पर सतत् उपलब्ध रहेगा। इस पत्रिका के द्वारा देश एवं विदेश में आयुर्वेद के प्रति रूचि रखने वाले लोग लाभ ले रहे हैं तथा इस विधा का प्रचार एवं प्रसार भी तेजी से किया जा रहा है।

प्रस्तुत अंक–2 वर्षा ऋतु विषय पर आधारित है। आयुर्वेद विधा में वर्ष को 6 ऋतुओं के आधार पर वर्गीकृत किया गया है। प्रत्येक ऋतु दो माह का होता है, अर्थात प्रत्येक ऋतु में दो प्रकाशन किये जायेंगे। निम्नलिखित विषयों पर लेख प्रकाशित की जायेगी।

1. ऋतु के अनुसार औषधियों का उपयोग।
2. औषधियों के संग्रह, संरक्षण और इसके लाभ।
3. ऋतु के अनुसार होने वाले रोगों का वर्णन।
4. ऋतु के अनुसार शरीर क्रियात्मक परिवर्तन का वर्णन।
5. ऋतु के अनुसार विभिन्न संहिता सिद्धान्तों की उपयोगिता।
6. ऋतु के अनुसार पंचकर्म की सुदृढ़ व्यवस्था (स्वस्थ एवं रोगी की चिकित्सा तथा बचाव हेतु)
7. इस परिप्रेक्ष्य में आधुनिक समकालीन अनुसंधानों की विवेचना।
8. अनुभूत चिकित्सकीय योग या औषधि का प्रायोगिक ज्ञान यदि किसी के पास उपलब्ध हो।
9. ऋतु एवं दोषों के अनुसार आहार, विहार एवं योग की व्यवस्था।
10. पंचाशत महाकषाय की ऋतुओं के अनुसार उपयोगिता।

इस पत्रिका के माध्यम से आयुर्वेद संकाय बी0एच0यू0 द्वारा जनहित, देशहित एवं आयुर्वेद को उपयोगी बनाये जाने हेतु आप सभी से अनुरोध है कि लेख सरल, सामान्य एवं सुव्यवस्थित हिन्दी भाषा में भेजकर जागरूकता हेतु सहयोग प्रदान करने का कष्ट करें।

सधन्यवाद!

सम्पादक
वैद्य सुशील कुमार दूबे
आयुर्वेद संकाय, चिकित्सा विज्ञान संस्थान
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

विषय–सूची

क्र0	शीर्षक	पेज सं.
1	वर्षा ऋतु में अन्तःस्रावी ग्रन्थियों का शरीर पर महत्व प्रो. यामिनी भूषण त्रिपाठी, संकाय प्रमुख	1
2	वर्षा ऋतु एवं दोष की चिकित्सा व्यवस्था डॉ0 नन्द किशोर दाधीचि, सह आचार्य उत्तराखंड विश्वविद्यालय, दूहरादूर, वैद्य सुशील कुमार दूबे, सहायक आचार्य, आयुर्वेद संकाय, बी0एच0यू0	2
3	वर्षा ऋतु में होने वाले परिवर्तन व उनका समाधान डॉ मेघा गुप्ता , जे0आर0 –2, कौमारभृत्य , स्टेट आयुर्वेदिक कॉलेज , दूडियागंज , लखनऊ	2-3
4	वर्षा ऋतुचर्या में आहार–विहार का प्रावधान वीना, पी.एच.डी. स्कॉलर, क्रियाशारीर विभाग, आयुर्वेद संकाय, आई.एम.एस., बी.एच.यू. वन्दना वर्मा, असिस्टेंट प्रोफेसर, क्रियाशारीर विभाग, आयुर्वेद संकाय, बी.एच.यू.	3-4
5	त्वचा रोग और आयुर्वेद डॉ0 स्वाती बमनोटे (एम0डी0) लिलया आयुर्वेद पंचकर्म, चिकित्सालय, साईनगर, अमरावती	4-5
6	वर्षा ऋतु में स्वास्थ्य रक्षण के उपाय वैद्य योगेश कुमार पाण्डेय, सहायक आचार्य, कायचिकित्सा, सी.बी.पी. आयुर्वेद चरक संस्थान, नई दिल्ली	6
7	वर्षा ऋतु में जीवाणु वाईब्रियो कॉलरि का प्रभाव सत्येन्द्र कुमार मौर्य, डॉ0 नरेन्द्र शंकर त्रिपाठी, क्रिया शरीर विभाग, आयुर्वेद संकाय का0हि0वि0वि0	7
8	वर्षा ऋतु की बीमारियाँ और उनसे बचाव वैद्य अनुराग पाण्डेय, सहायक आचार्य, विकृति विज्ञान विभाग, आयुर्वेद संकाय	7-8
9	वर्षा ऋतु का साहित्यिक वर्णन व वैज्ञानिक सुझाव राकेश कुमार प्रजापति (शोध छात्र), डा. नरेन्द्र शंकर त्रिपाठी (सहायक आचार्य) क्रिया शारीर विभाग, आयुर्वेद संकाय, चिकित्सा विज्ञान संस्थान, का0हि0वि0वि0	8-9
10	वर्षा ऋतु में गुदरोग डॉ0 रश्मि गुप्ता, असीस्टेंट प्रोफेसर, शल्य तन्त्र विभाग, आयुर्वेद संकाय, आई0एम0एस0	9-10
11	आयुर्वेद संकाय की मासिक उपलब्धियां	10

वर्षा ऋतु में अन्तःस्रावी ग्रन्थियों का शरीर पर महत्व

प्रो. यामिनी भूषण त्रिपाठी, संकाय प्रमुख

ऋतुओं के कारण पर्यावरण में बहुत से बदलाव होते है अतः इससे बचने हेतु हर प्राणी में एक सन्तुलन की प्रक्रिया (स्ट्रेस मैनेजमेन्ट) होती रहती है जो मुख्य रुप से मस्तिष्क में हाइपोथैलेमस एवं पिट्यूटरी ग्रन्थि एवं एड्रिनल ग्रन्थि के श्राव से नियन्त्रित होती है। शरीर के एड्रिनल ग्रन्थि से निकलने वाला ग्लूकोकॉर्टीक्वायड हार्मोन शरीर के पूरे चया–पचय (मेटाबोलिज्म) को नियंत्रित करने वाला एक महत्वपूर्ण हारमोन है। यह किडनी के उपरी भाग में स्थित एड्रिनल ग्लेन्ड से निकलता है। मुख्य रुप से यह ग्लूकोज के चया पचय को यकृत में होने वाली क्रियाओं को नियंत्रित करते हुये कार्य करता है। शरीर में संचित ग्लाइकोजन का इस्तेमाल भी इसी से नियंत्रित होता है।

इसी ग्रन्थि के दूसरे भाग मेडुला से निकलने वाला एड्रीनलीन नामक हार्मोन भी इसकी क्रिया में अतिमहत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह हार्मोन स्नायुतन्त्र (नर्वस सिस्टम) एवं मानसिक सक्रियता से भी लगातार प्रभावित होता है। अतः पांचों ज्ञानेन्द्रियां इस ग्रन्थि के दोनो हार्मोन के बनने, निकलने एवं कार्य क्षमता को लगातार प्रभावित करती रहती है।

इस ग्रन्थि पर ऋतुओं का सीधा प्रभाव मानसिक सोच एवं ज्ञानेन्द्रिय सक्रियता पर निर्भर करता है। प्रतिदिन सोने–जगने का चक्र भी इसे नियंत्रित करता है। अतः पूर्ण स्वस्थ रहने हेतु उपरोक्त वर्णित सभी कारणों को नियंत्रित करना आवश्यक है जो आयुर्वेद एवं योग में विस्तृत रुप से वर्णित है। इनका यथा सम्भव पालन करना चाहिए।

ग्लूकोकॉर्टीक्वायड हार्मोन व्याधि क्षमत्व एवं आन्तरिक शोथ को भी नियंत्रित करता है जो वात जनित रोगों का मुख्य कारण है। इनको स्ट्रेस हार्मोन भी कहते है तथा यह सीधे पिट्यूटरी से निकलने वाले हार्मोन से नियंत्रित होता है जो मस्तिष्क के हाइपोथैलेमस वाले भाग से आधीन होता है जो पांचों ज्ञानेन्द्रियों से नियंत्रित होता है। अतः यह वाह्य एवं आन्तरिक परिवर्तनों द्वारा प्रभावित होकर अपनी सक्रियता नियंत्रित करता रहता है। इसकी कमी के कारण स्राव से शोथ, आटोइम्यून रोग, संधिशोथ, रक्त सम्बन्धी रोग इत्यादि उत्पन्न होते है परन्तु इसकी अधिकता से भी कई रोग उत्पन्न होते है जैसे आस्टियोपोरोसिस, मधुमेह, पेट पर चर्बी का इकट्ठा होना, रक्तचाप इत्यादि।

इसी प्रकार आटोफेजी भी स्ट्रेस द्वार नियंत्रित प्रक्रिया है। आटोफेजी का कार्य कोशिकाओं में खाद्य पदार्थो की कमी की अवस्था में कोशिकाओं में एकत्रित बेकार एवं पुराने प्रोटीन को तोड़कर उनके उत्पादों को नयी प्रोटीन बनने में उपयोग आने योग्य बनाता है। यह क्रिया भी ऋतुचर्या, दिनचर्या एवं खान–पान से नियंत्रित्रत होती है तथा इसमें गड़बड़ी आने से तमाम रोग उत्पन्न होते हैं। उपवास रखने पर भी इसकी क्रिया को गति मिलती है तथा स्वास्थ्य ठीक रहता है। अतः हर धर्म में उपवास रखने का महात्म बताया गया है तथा इसका पालन करने वाले स्वस्थ रहते है। आयुर्वेद में भी उपवास एवं लघन का बहुत महत्व दिया गया है।

आयुर्वेद की दृष्टि से वर्षा ऋतु में वायु का प्रकोप होता है तथा गठिया एवं पेट में गैस इत्यादि का रोग बढ़ता है। यदि बायोकेमेस्ट्री की दृष्टि से देखा जाये जो वेगस नर्व का स्टीमुलेसन, कैटेकोलामाइन की बढ़त एवं ग्लूकोकार्टीक्वायड का असन्तुलन इस ऋतु में अधिक हो सकता है। इसके अध्ययन की आवश्यकता है। इसी प्रकार वे सभी खाद्य पदार्थ तथा रहन–सहन की पद्धति तथा मानसिक सोच जो इन क्रियाओं को कम करती हों वे वर्षा ऋतु में सेवन करनी चाहिए। तथा इसके वैज्ञानिक प्रभाव का अध्ययन करने की आवश्यकता है जो आयुर्वेद संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में करने का पूर्ण प्रयास किया जा रहा है।

वर्षा ऋतु एवं दोष की चिकित्सा व्यवस्था

डॉ0 नन्द किशोर दाधीचि, सह आचार्य उत्तराखंड विश्वविद्यालय, देहरादून,
वैद्य सुशील कुमार दूबे, सहायक आचार्य, आयुर्वेद संकाय, बी0एच0यू0

भारतीय वर्ष को 6 ऋतुओं में बांटा गया है जिसमें चिकित्सकीय दृष्टि से वर्षा ऋतु का अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका है। क्योंकि इस ऋतु में जहां एक तरफ वात दोष का प्रकोप होता है वहीं पित्त दोष का संचय भी हो रहा होता है। वात का प्राकृतिक गुण जहां शीत होता है वहीं पित्त का प्राकृतिक गुण गरम होता है, इससे एक तरफ विरोधी गुण होने से वात दोष अत्यधिक प्रकुपित नहीं हो पाता है, परन्तु थोड़े ही मिथ्या आहार–विहार से तत्काल रोग उत्पन्न हो जाता है जिससे इस ऋतु में रोगियों की संख्या में काफी बढ़ोत्तरी हो जाती है, इसलिए विशेष रूप से इस मौसम में बचाव की आवश्यकता होती है।

दोष तीन प्रकार के होते है वात, पित्त तथा कफ उसमें वात दोष की प्रधानता बताते हुए यह बताया गया है कि पित्त एवं कफ में गति करने की क्षमता नहीं होती है सिर्फ वात के द्वारा गति प्रदान किया जाता है और जब गति नहीं हो पायेगी तो दोष दुष्य समुर्छाना नहीं होगी जिससे रोगों से मुक्ति मिल सकती है। अर्थात यदि हम वात दोष को नियंत्रित कर लेते हैं तो और दोषों को नियंत्रित करने में आसानी हो जाती हैं वात को कम करने वाले रस मीठा, खट्टा और नमकीन, वात को बढ़ाने वाले रस कडुवा, तिक्त और कशैयला होता है। इस ऋतु में सामान्य पंचकर्म क्रिया में बस्ती कर्म किये जाने का प्राविधान किया गया है जो स्वस्थ तथा रोगी दोनों व्यक्ति करा सकते है साथ ही तेल का भी अति महत्वपर्ण योगदान मालिश एवं पीने के लिए बताया गया है आयुर्वेदीय चिकित्सकीय परामर्श बी0एच0यू0 के विशेषज्ञ चिकित्सकों की राय पर ले सकते हैं।

वर्षा ऋतु में होने वाले परिवर्तन व उनका समाधान

डॉ मेघा गुप्ता , जे0आर0 –2, कौमारभृत्य , स्टेट आयुर्वेदिक कॉलेज , दूडियागंज , लखनऊ

वर्षा की बूंदे वनस्पति के लिए अमृत समान होती है मगर यह भी सच है कि वर्षा ऋतु के दौरान कई बीमारिया एक साथ दस्तक देती है जो कि मनुष्य के लिए घातक सिद्ध होती है इसलिए स्वस्थ और निरोग रहने के लिए आवश्यक है कि प्रत्येक मनुष्य अपनी प्रकृति शारीरिक अवस्था, देष, काल और ऋतु के अनुसार भोजन करें। यदि ऐसा नही किया जाता है, तो शरीर अनेक रोगो से ग्रसित हो जाता है । यही कारण है कि आयुर्वेद में ऋतु के आधार पर आहार विहार का निर्धारण किया गया है। वर्षा ऋतु में वातावरण में नमी अधिक होने के कारण शरीर की पाचन क्रिया में सहायक अग्नि मंद पड जाती है वात, पित्त, कफ का प्रकोप अधिक होने लगता है शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता एवं रोगो से लडने की शक्ति भी क्षीण हो जाती है जिससे अनेक रोग उत्पन्न हो जाते है।

ध्यान रखने योग्य बातें –

- वर्षा ऋतु में नये अनाज का इस्तेमाल न करें। पुराने चावल, गेंहू, खिचडी, मूंग की दाल, परवल, बैंगन, बथुए का साग, चाय आदि का प्रयोग करना चाहिए ।
- वर्षा ऋतु में मूंगफली, आम, आवला, तुलसी को अपने आहार का हिस्सा बनायें । ये सभी चींजे शरीर में रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढाने में उपयोगी साबित होते है। वहीं प्रोसेसड फूड की मात्रा जितनी हो सके कम कर दें, क्योंकि प्रोसेसड फूड में विटामिन सी, जिंक की मात्रा कम होती है।
- अपने आहार में ऐसे खाद्य पदार्थ को शामिल करें जिनमें शरीर को लाभ पहुचाने वाले बैक्टीरिया होते है जैसे – दही, ढोसा ,ढोकला इत्यादि । भुट्टे में प्रचुर मात्रा में विटामिन सी, विटामिन बी1,फोलेट और फाइबर पाया जाता है।
- साथ ही कोष्ठ को शुद्व करने के लिए त्रिफला लें। सोंठ, लहसुन , प्याज तथा पुदीने का भी सेवन करें।
- इस ऋतु मे अधिक ठंडे पदार्थ न लें । जल को उबालकर ठंडा होने पर ही सेवन करें।
- भोजन हल्का, सुपाच्य व मात्रा में अल्प करें ।

- बारिश में भीगने, गंदे पानी, पसीना न सूखने एवं देर तक गीला रहने के कारण फफूद का संक्रमण हो जाता है इससे बचाव हेतू लंबे समय तक गीले कपडे विशेषकर जूते मोजे नही पहनने चाहिए व पैरो में सरसों के तैल की मालिश करनी चाहिए।
- वर्षा ऋतु में आई फ्लू यानी कंजक्टीवाइटिस तेजी से फैलती है। इससे बचने के लिए पीडित व्यक्ति द्वारा इस्तेमाल किए जा रहे रुमाल, तौलिए इत्यादि का उपयोग नही करना चाहिए। आंखो पर काला चष्मा अवष्य लगाना चाहिए।

वर्षा ऋतुचर्या में आहार–विहार का प्रावधान

वीना[1], वन्दना वर्मा[2]
[1]पी.एच.डी. स्कॉलर, क्रिया शारीर विभाग, आयुर्वेद संकाय, आई.एम.एस., बी.एच.यू., वाराणसी
[2]असिस्टेंट प्रोफेसर, क्रियाशारीर विभाग, आयुर्वेद संकाय, आई.एम.एस., बी.एच.यू., वाराणसी

आयुर्वेद में वर्ष रूपी काल को छः ऋतु में वर्णित किया गया है– शिशिर, वसंत, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, और हेमंत। व्यक्ति को स्वस्थ रहने के लिए एवं ऋतुजन्य व्याधियों से बचने के लिए ऋतुनुसार सात्म्य आहार–विहार ही करना चाहिए। ऋतुसात्म्य आहार से बल (रोग प्रतिरोधक क्षमता), वर्ण और सुखायु की प्राप्ति होती है। हमारे शरीर की सभी क्रियाएं दोषों के द्वारा नियमित होती है, तथा दोषों की शरीर में स्थिति स्वयं ऋतुओं के अनुसार बदलती रहती है। जिसके कारण ऋतुजन्य व्याधि होने की सम्भावना रहती है। विशेषतः वर्षा ऋतु में पित्त का संचय होता है, वात का प्रकोप होता है तथा क्लेद की वृद्धि हो जाती है। वर्षा ऋतु में अग्नि बल (अर्थात पाचन शक्ति) एवं शरीर बल मंद, वात, पित्त, कफ तीनो दोष कुपित होने, तथा प्रदूषित जल के सेवन से बुखार (वायरल), खासी, जुकाम, रोग प्रतिरोधक क्षमता सम्बन्धी एवं सवंमित बीमारियाँ आसानी से हो जाती है, जो एक से दूसरे लोगो में फैलती है। अतः इनसे बचने के लिए लोगो को प्रतिदिन के आहार–विहार पर विशेष ध्यान देना चाहिए। वर्षा ऋतु में किस तरह के आहार का सेवन करना चाहिए और किस तरह के आहार का त्याग करना चाहिए, इसका वर्णन निम्नवत है ।

- **सेवन करने योग्य आहारः** वर्षा ऋतु में खाने योग्य भोज्य पदार्थ इस प्रकार है–
- **अनाज एवं दालेंः** छिलके वाली दाल, अंकुरित दाल एवं अनाज–जौ, गेहूँ, चावल (पुराना), स्नेह घी जिस अन्न में स्पष्ट दिखता हो, का सेवन करना चाहिए ।
- **सब्जियाँ एवं फलः** नींबू, हरीसब्जी–परवल, लोविया, लौकी, सेम, लहशन, अदरक, सेब, अनार, खजूर ।
- **पेय पदार्थः** वर्षा ऋतु में क्लेद बढ़ता है, अतः शहद पानी का सेवन करना चाहिए ।
- पित्त को शांत करने के लिए शहद के साथ मध्वीकारिष्ट (द्राक्षासव), अम्ल, लवण का रस, पानी को उबाल कर ठंडा करके पीना चाहिए। दही, छाछ, सब्जियों के सूप का सेवन करना चाहिए ।
- **मसालेः** सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, दालचीनी, तेजपत्ता, तुलसी, इलायची, लौंग, हल्दी ।
- **अन्यः** भोजन हल्का सुपाच्य, ताजा एवं गर्म होना चाहिए, जंगली–वन के पशुओं का मांस, खान–पान में शहद का उपयोग करना चाहिए, हरीतकी का सेवन सेंधानमक के साथ बताया गया है।
- **विहारः** वात प्रकोप की शांति के लिए तेल की मालिश करनी चाहिए, उवटन लगाना, स्नान करना, सुगंध धारण करना, माला पहिनना, सूखे स्थान पर रहना, हल्का एवं साफ वस्त्र धारण करना चाहिए ।
- **त्याज्य आहारः** वर्षा ऋतु में न खाने योग्य भोज्य पदार्थ इस प्रकार है–
- **अनाज एवं दालेंः** बांसी आहार, ज्यादा पानी में घुला सत्तू का सेवन नही करना चाहिए ।
- **सब्जियाँ एवं फलः** बैंगन, शाक, भिंडी, अरवी, तीखी मिर्च, आम, खरबूजा, तरबूजा, अमरुद, नाशपाती में वर्षा ऋतु में कीड़े हो जाते है ।

- **पेय पदार्थः** नदी, तालाब एवं कुआं का पानी, अधिक जल का सेवन, धूप एवं व्यायाम का सेवन इस ऋतु में नही करना चाहिए ।
- **अन्यः** गरिष्ट भोजन का सेवन नही करना चाहिए ।
- **विहारः** ओस तथा खुले स्थान पर शयन, एवं दिन में नही सोना चाहिए ।

त्वचा रोग और आयुर्वेद

डॉ0 स्वाती बमनोटे (एम0डी0) लिलया आयुर्वेद पंचकर्म, चिकित्सालय, साईनगर, अमरावती

''दोषधातुमलमूलं ही शरीरं।''

ऐसा कहा जाता है कि, हमारी त्वचा हमारे शरीर के अंतर्भुत क्रियाओं का आयना हैं आयुर्वेद के अनुसार सौंदर्य एवं स्वास्थ्य यह एक दूसरे से संलग्नित एक सिक्के के दो पहलू हैं। आयुर्वेद में वाह्य, आभ्यंतर व नैतिक शुद्धी को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। इसलिये दिनचर्या, ऋतुचर्या, समतोल भोजन, वनस्पतीजन्य सौंदर्य प्रसाधन, रसायन एवं पंचकर्म चिकित्सा से सौंदर्य में अधिक वृद्धि की जा सकती है और इसी वजह से यह उपचार पद्धति अन्य उपचार पद्धतियों से अधिक परिणामकारक सिद्ध हुई है।

उत्तम व्यक्तित्व के लिये शारीरिक स्वास्थ्य, सुडौल शरीर, सतेज कांती एवं निरोगी केश जरूरी होते है किन्तु आजकल के व्यस्त जीवन शैली के कारण हम अपने त्वचा का सुयोग्य ख्याल नहीं रख पाते। अधिक प्रमाण में साबुन, शैम्पू का इस्तेमाल किया जाता है, परिणामस्वरूप हमारी त्वचा अल्प कालावधि में ही निस्तेज होने लगती है एवं अल्प समय में ही हमारे शरीर में वार्धक्यजन्य लक्षण दिखाई देना शुरू हो जाते हैं।

आयुर्वेद के अनुसार ग्रीष्म ऋतु में शरीर में पित्त का संचय होता है एवं वर्षा ऋतु में पित्त का प्रकोप होता है। त्वचा विकार होने के लिये प्रकुपित पित्त की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। यही वजह है इस ऋतु में त्वचा रोग विशेषज्ञों के पास विशेष भीड़ देखी जाती है।

त्वचा विकार विशेषतः शरीर अंतर्गत रक्त, मांस एवं मेद धातु के आश्रय से होते हैं। त्वचा रोग के उपचार हेतु विविध प्रकार के मलहम, तेल इस्तेमाल किये जाते हैं किन्तु वे त्वचा के अंतःस्थल तक पहुंच नहीं पाते, व्याधि के लक्षण अल्प कालावधि के लिये कम हो जाते हैं परंतु व्याधि का संपूर्ण विनाश नहीं हो पाता। आयुर्वेद चिकित्सा व्याधि के कारण रूप की जाती है। अगर त्वचा दृष्टि जीर्ण है या धातुदुष्टी अत्याधिक प्रमाण में है तो लक्षण कम होने के लिये अधिक कालावधि लग सकता है, व्याधि का धीरे–धीरे संपूर्ण नाश हो जाता है।

आयुर्वेदानुसार विकृत आहार, विहार यह व्याधि निर्मिती के दो मुख्य कारण होते है। हमारे दैनंदिन जीवन शैली में इन कारणों का इस्तेमाल अनायास किया जाता है। ऋतुरूप एवं अपने प्रकृतीरूप आहार विहार का अवलंब न करने से शरीर अंतर्गत धातु एवं मल को विकृत स्वरूप प्राप्त हो जाता है, परिणाम त्वचा विकार उत्पन्न हो जाते है। त्वचा विकार में विशेषतः पित्तदोष विकृती उत्पन्न हो जाती है। उष्ण, मसालेदार, तले हुये पदार्थ, अम्ल पदार्थ जैसे टोमैटो, नींबू वर्गीय फल, दही, व्हिनेगर अधिक प्रमाण में चाय, कॉफी, मद्य सेवन, शक्कर, मैदा, डब्बा बन्द पदार्थ, मांसाहार, फास्टफूड, धूप में अधिक समय तक काम करना इन कारणों से पित्त प्रकुपित होकर त्वचा विकार उत्पन्न हो जाते है। इसी वजह से ऐसे कारणो का नाश करना अर्थात निदान परिवर्तन करना यह आयुर्वेद की मुख्य चिकित्सा प्रणाली है। इसी वजह से जिन–जिन कारणों से शरीर में पित्त की वृद्धि होगी उनका बिल्कुल इस्तेमाल न करें। पित्त दोष के साथ ही सुंदर स्वस्थ प्राकृत त्वचा के लिये शरीर अंतर्गत वातदोष की स्थिति भी प्राकृत होना आवश्यक है। वातदोष प्रकृतावस्था में रहेगा तो वह शरीरांतर्गत सभी कोशिका व अन्य दो दोषों को प्रकृतावस्था में रखेगा, अन्यथा शरीर अंतर्गत कोशिका विकृत होकर, त्वचा विकार उत्पन्न हो जाते है।

शरीर अंतर्गत क्रिया जैसे पचन, चयापचय, मलविसर्जन इनका प्रभाव अपने त्वचा के स्वास्थ्य पर पड़ता है। शरीर की पाचन शक्ति अगर मंद है या सेवन किये गये अन्न का प्राकृत पचन एवं मलविसर्जन सुयोग्य पद्धति से न हुआ हो तो यही विषारी तत्व शरीर में इकट्ठा हो जाते है, परिणामस्वरूप मुखदूषिका उत्पन्न हो जाते है। कम उम्र में ही वार्धक्यजन्य लक्षण दिखाई देते हैं।

सभी प्रकार के त्वचा विकार में विशेषतः हल्दी, आमला, नीम के पत्तों का इस्तेमाल करना चाहिये, हल्दी सिद्ध खोबरातेल का उपयोग करें, नियमित रूप से मल प्रवृत्ति के लिये त्रिफला चूर्ण का आभ्यंतर प्रयोग करे, त्रिफला के काढे से त्वचा को स्वच्छ करे, खीरे का रस एवं पकी पपई गर का लेप करे, हरी मेहंदी के पत्ते पिसकर उसकी पेस्ट हाथ पाव के तलवो को लगाने से वर्षा ऋतु के त्वचा विकार से बचा जा सकता है। शुद्ध पानी का उचित प्रमाण में प्रयोग करें, वार्धक्य जन्य लक्षण कम करने के लिये विविध रसायनों का प्रयोग करें। विविध सब्जियों में अलग–अलग प्रकार के विटॅमिन्स मिनरल्स रहते हैं वे त्वचा का पोषण करते हैं एवं उनके यथायोग्य सेवन से अकाली वार्धक्य नहीं आता। मीठे फल जैसे द्राक्षा, तरबूज, अमरूद, सेब, आंवला त्वचा के लिये उपयुक्त होते हैं। विविध प्रकार के अनाजों का सेवन करें। गाय का दूध, नारियल तेल, तिल्ली का तेल इनका आहार में समावेश करें। इन सब चीजों से त्वचा का पोषण होता है, त्वचा स्निग्ध एवं चमकदार होती है।

सेवन किये आहार का यथायोग्य पचन होने के लिये हल्दी, काली मिर्च एवं शुठी का प्रयोग करे, तले अन्न के सेवन से भुन के बर्तन में पकाये ताजे अन्न का सेवन करें। सम्पूर्ण शरीर को औषधियुक्त तेल से नियमित मालिश करें। साबुन की जगह बेसन या विविध उबटन त्वचा पर लगाकर स्नान करें। अपना अग्निबल देखकर आहार का सेवन करें। रात्री के समय 7 से 8 घण्टे नियमित नींद लें, रात्री 10 से सुबह 5 का समय नींद के लिये उचित समय है। दोपहर में नींद न लें। यथायोग्य व्यायाम, प्राणायाम, मेडिटेशन करें, तनावमुक्त जियें। अपने घर के आसपास की जगह साफ सुथरी एवं सुखी रखें क्योंकि विविध कीटाणु उपसर्ग से त्वचा विकार होने का खतरा बना रहता है। कपड़े स्वच्छ एवं सुखे पहने, गिले कपड़ों से त्वचा विकार उत्पन्न होते हैं। आजकल श्वेतकुष्ठ व रूग्ण अधिक प्रमाण में पाये जाते है। अगर इन दोनों व्याधियों में शुरू में ही आयुर्वेदिक चिकित्सा अपनायी तो बहुत ही अच्छे परिणाम दिखाई देते हैं। विशेषकर आयुर्वेदिक पंचकर्म जैसे वमन, विरेचन, रक्तमोक्षण, शिरोधारा इन त्वचा विकारों में जादू के समान परिणाम दिखाई देता है।

आयुर्वेद यह 5000 साल से भी पुराना भारतीय वैद्य शास्त्र है। यूरोप अमेरिका में आयुर्वेद चिकित्सा प्रणाली ने बहुत लोकप्रियता प्राप्त की है। आयुर्वेद पद्धति के अवलंब से अपने देश की पुरानी पीढ़ी सुदृढ़ दीर्घ जीवन जीती थी। कुछ कारणवश बीच के काल में इस शास्त्र का लोप हुआ लेकिन अब स्थिति बदल चुकी है, नागरिक अपने प्रकृति के विषय में सजग है और जो शारीरिक मानसिक दृष्टि से निरोगी स्वस्थ जीवन जीना चाहते हैं वे आयुर्वेद का अवलंब करते हुये दिखाई दे रहे हैं।

'चलो सुंदर दिखे, सुंदर बाते करें, सुंदर विचार रखे, इस धरती को सुंदर सुदृढ़ रखें।

वर्षा ऋतु में स्वास्थ्य रक्षण के उपाय

वैद्य योगेश कुमार पाण्डेय, सहायक आचार्य, कायचिकित्सा, सी.बी.पी. आयुर्वेद चरक संस्थान, नई दिल्ली

भाद्रपद एवं आश्विन मास को सम्मिलति रूप से वर्षा ऋतु कहा जाता है। यह आदानकाल की ऋतु है जिसमें देह के दुर्बल होने के कारण जाठराग्नि भी दुर्बल हो जाती है। वर्षा ऋतु में जल की प्रचुर उपलब्धता होने से प्रायः औषधियां तरूण, अल्पवीर्य युक्त एवं कलुषित हो जाती हैं। होता यह है कि आकाश मेघाच्छन्न रहता है, जमीन गीली रहती है तथा शीत की अधिकता रहती है। भूवाष्प की अधिकता स्वभावतया त्रिदोष कारक होती है। आकाश के मेघाच्छन्न रहने तथा लगातार फुहार पडते रहने से वातश्लेष्म का प्रकोप होता है। मनुष्य स्वयं भी क्लिन्न देह वाले हो जाते है। यह सब मिलकर पाचकाग्नि को नष्ट कर देतें हैं। पुनश्च दूषित जल, आहार एवं औषध सेवन करने से जल, आहार एवं औषध का प्रायः ही अम्ल विपाक हो जाया करता है। विदाह रहने लगता है। इस ऋतु में इसी कारण से पित्त का संचय होता है जो कि कालान्तर में पित्त प्रकोप का कारण बनता है। अम्ल विपाक तात्कालिक रूप से पित्तश्लेष्म कारक होता है। दूसरे अग्निबल क्षीण हो जाने से स्वाभाविक रूप से धातु पोषक

रस का निर्माण उचित रीति से नहीं होता अतः धातुक्षय हो जाने से वात प्रकोप होता है। इस प्रकार वर्षा ऋतु वातादि तीनों दोष प्रकुपित हो जाते हैं। अतएव वर्षा ऋतु में सभी साधारण विधियों जिनसे कि वात, पित्त एवं कफ का शमन हो सके उनका प्रयोग करना चाहिए। सभी क्रियाओं को करते समय इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि जाठराग्नि प्रदीप्त रहे। इसलिए स्वास्थ्य रक्षण की दृष्टि से निम्न बिन्दुओं का ध्यान रखना आवश्यक हो जाता है –

1. उदमन्थ (जल की अधिकता वाला सत्तु), दिवास्वप्न, ओस के सेवन से बचें।
2. व्यायाम, आतपसेवन, तथा ग्राम्य धर्म का निषेध करें।
3. प्रायः अम्ल लवण युक्त स्निग्ध भोजन की योजना करें।
4. पान भोजन आदि में प्रायः अल्प मात्रा में शहद का प्रयोग करें।
5. अग्नि के संरक्षणार्थ पुराण यव, शालि, गोधूम का प्रयोग करें।
6. दीपन पाचनद्रव्यों से संस्कारित जांगल मांस रस एवं यूष का प्रयोग करें।
7. कूप, सारस, माहेन्द्र अथवा तप्तशील जल का प्रयोग करें।
8. नित्य प्रति प्रघर्षण, उद्धर्तन, स्नान एवं सुगन्धि लेप का प्रयोग करावें।
9. नमी रहित स्थान में निवास करें।
10. शरीर को अधिक समय तक गीला न रहनें दें।
11. लघु स्वच्छ वस्त्र धारण करें।
12. शहदयुक्त जल का अथवा माध्वीकारिष्ट का पान करें।
13. शोधन हेतु प्रतिदिन सेंधा नमक के साथ हरड़ का चूरण प्रयोग करायें। यह रसायन भी है।
14. भोजन से पूर्व सेंधा नमक एवं अदरक का प्रयोग करें।
15. जाठराग्निमंद हो अथवा विदग्धा जीर्ण की स्थिति हो अथवा वातश्लेष्म के प्रकोप की स्थिति हो तो पंचकोल का फाण्ट पिलायें।
16. प्रायः अपच की स्थिति रहती हो तो कुछ भी कच्चा न खायें। चीजों को उबाल कर लें।
17. हरे पत्तियों की सब्जियां तथा अंकुरित धान्य न लें।
18. आहार–विहार मौसम का मिजाज देख कर तय करें–जैसे यदि वर्षा के बीच में अच्छी धूप निकली हो तो उसके सेवन से बचें। उस समय अधिक तीखा चटपटा खट्टा भोजन न लें। इसके उलट अगर बरसात हो रही हो तो गरम, चटपटा, खट्टा भोजन ले सकते हैं।
19. अपने आसपास पानी न इकठ्ठा होने दें।
20. गुग्गुलू, देवदारू, अगुरू तथा नीम की सूखी पत्तियों से घर में धूपन करें।
21. यथावश्यक पंचकर्म चिकित्सा अर्थात वमन, विरेचन, नस्य, आस्थापन, अनुवासन एवं रक्त मोक्षण का प्रयोग किसी चिकित्सक की सलाह से करें।

वर्षा ऋतु में जीवाणु वाईब्रियो कॉलरि का प्रभाव

सत्येन्द्र कुमार मौर्य, डॉ0 नरेन्द्र शंकर त्रिपाठी, क्रिया शरीर विभाग, आयुर्वेद संकाय, का0हि0वि0वि0

वाईब्रियो कॉलेरी एक ग्राम–निगेटिव जीवाणु है जो एक एंटेरोटॉक्सिन, कॉलेरा टोक्सिन का उत्पादन करता है, जिसका छोटी आंत के श्लेष्मीय उपकला स्तर पर हुआ असर, इस रोग के सबसे कुख्यात लक्षण, बहुत अधिक दस्त के लिए जिम्मेदार है। आम भाषा में इसे हैजा भी कहते हैं। हैजा उन ज्ञात रोगों में से एक है जो बहुत तेजी से घातक असर करता है। इसके सबसे गंभीर रूप में, रोग के लक्षणों की शुरूआत के एक घंटे के भीतर ही, एक स्वस्थ व्यक्ति का रक्तचाप घटकर न्यूनतम रक्त चाप के स्तर पर पहुँच सकता है और संक्रमिक मरीज को अगर चिकित्सा प्रदान नहीं की जाती तो वो तीन घंटे के अन्दर मर सकता है। एक सामान्य अवस्था में रोगी को पहले पतले दस्त होते हैं और 4 से 12 घंटो में वह आघात की अवस्था में पहुँच सकता है और अगर उसे मौखिक

पुनर्जलीकरण चिकित्सा प्रदान नहीं की जाती है तो, 18 घण्टे के भीतर रोगी की मृत्यु भी हो सकती है॥

विसूचिका या आम बोलचाल में हैजा, जिसे एशियाई महामारी के रूप में भी जाना जाता है, एक संक्रामक आंत्रशोथ है। मनुष्यों में इसका संचरण, इस जीवाणु द्वारा दूषित भोजन या पानी को ग्रहण करने के माध्यम से होता है। वर्षा ऋतु में यह जीवाणु काफी सक्रिय हो जाता है क्योंकि वर्षा ऋतु में हर तरफ पानी काफी समय तक जमा होने से यह पानी दूषित हो जाता है जिसके कारण यह जीवाणु पैदा हो जाते हैं।

लक्षण :–

हैजे के बैक्टिरिया शरीर में प्रवेश कर अपनी संख्या बढ़ाते रहते हैं और जब पर्याप्त संख्या में हो जाते हैं तो वहाँ विष (टोक्सिन) पैदा करते हैं, यह विष रक्त द्वारा शरीर के अन्य भागों में जाता है और रोग बढ़ाता है।

इस रोग में जबरदस्त उल्टियाँ, दस्त होते हैं। उल्टी में पानी बहुत अधिक होता है। यह उल्टी सफेद रंग की होती है। शरीर का सारा पानी इन दस्तों में निकल जाता है और रोगी निढाल, थका–थका सा कमजोर व शक्तिहीन हो जाता है। इस रोग में प्यास ज्यादा लगती है, नाड़ी गति (पल्स) मंद पड़ जाती है, मूत्र (यूरिन) कम आता है व हालत बेहोशी जैसी होने लगती है। हैजा होने पर रोगी के हाथ पैर ठंडे पड़ जाते हैं। हैजा में रोगी की हृदय गति बढ़ जाती है।

रोकथाम व उपचार –

- खुला पानी नहीं पीना चाहिए। यह समस्या खास तौर पर गंदगी के कारण फैलती है।
- म्यूनिसिपल सप्लाई का पानी उबाल कर पीना चाहिए।
- गलियों में मिलने वाला खुला खाना नहीं खाना चाहिए।
- मानव मल से उगाई गई सब्जियाँ अच्छी तरह धो कर खानी चाहिए।
- कच्चा व अधपका मांसाहारी भोजन का सेवन नहीं करना चाहिए।
- इस समस्या से बचने के लिए बरसात के दिनों में पानी उबाल कर पीना चाहिए।
- समय–समय पर टीकाकरण कराते रहना चाहिए।

वर्षा ऋतु की बीमारियाँ और उनसे बचाव

वैद्य अनुराग पाण्डेय, सहायक आचार्य, विकृति विज्ञान विभाग, आयुर्वेद संकाय

भारत एक ऐसा देश है जिसे प्रकृति ने सभी छः ऋतुएं वर्षा, शरद, हेमंत, शिशिर, बसंत ग्रीष्म दी है। सभी ऋतुओं का अपना–अपना महत्व है। इन छः ऋतुओं में किस प्रकार का आहर एवं विहार करना चाहिए, इसका विस्तारपूर्वक वर्णन आयुर्वेद में किया गया है। इन सभी ऋतुओं में वर्षा जितनी मनोहारी ऋतु है, उतनी ही कभी–कभी कष्टप्रद भी बन जाती है इस मौसम में शरीर की अग्नि मंद होने से हमारी पाचन क्षमता प्रभावित होती है। वर्षाऋतु में बीमार होने का मुख्य कारण गंदगी, मच्छर व कीड़े, अशुद्ध पानी पीना, वातावरण में अत्यधिक नमी इत्यादि कारणों से विशेषकर वाइरल फीवर, डायरिया, मलेरिया, चिकन गुनिया, पीलिया, डेंगू और त्वाचीय संक्रमण आदि हो सकते हैं। अशुद्ध एवं संक्रमित पानी के कारण स्वस्थ मनुष्य को हैजा/कॉलरा का संक्रमण हो सकता है, यक संक्रमण हो सकता है, यह संक्रमण मानव शरीर में स्थित छोटी आंत की दीवारों पर अपना दुष्प्रभाव डालता है जिसके फलस्वरूप रोगी को दस्त की शिकायत प्रमुखतः होती है। आमतौर पर अधिकतर रोगियों में यह सामान्य अतिसार की तरह उत्पन्न होती है परन्तु कुछ लोगों में यह जानलेवा भी सिद्ध हो सकता है। यह रोग सभी, आयु वर्गों में पाया जाता है, परन्तु छोटे बच्चे इसके कुप्रभाव से ज्यादा ग्रसित होते हें। इस संक्रमण से बचाव हेतु स्वच्छ जलपान, आसपास की स्वच्छता जिससे की कीट मच्छर आदि न पनपने पाए एवं चिकित्सकीय सलाह लेना आवश्यक होता है। अतिसार का भी मुख्य लक्षण दस्त होता है। यह बीमारी हमारे शरीर में स्थित आंत्र में संक्रमण के कारण होती है। ये संक्रमण विभिन्न जीवाणु, विषाणु एवं प्रोटोजोवा द्वारा हो सकता है। रोगी के मल द्वारा अतिसार रोग उत्पन्न करने वाले जीवाणु, विषाणु तथा प्रोटोजोवा शरीर से बाहर आते हैं। इस मल द्वारा जल एवं अन्य खाद्य पदार्थों के दूषित हो जाने से स्वस्थ मनुष्य में यह रोग फैलता हैं कई बार सीधे रोगी के सम्पर्क में

आने से यह उसके द्वारा उपयोग में लाई गई संक्रमित वस्तुओं का उपयोग करने से भी यह रोग फैल सकता है। ऐसी वस्तुओं में रोगी का बिस्तर, तौलिया, बर्तन आदि प्रमुख होते हैं। गन्दे कुओं, नहरों, तालाबों तथा दूषित नदियों के पानी के सेवन से भी इस रोग की उत्पत्ति हो सकती है। मेलों, शादियों तथा उत्सवों के दौरान जब बहुत से लोग एक स्थान पर इकट्ठा होते हैं, तब इस रोग के फैलने की सम्भावना और भी बढ़ जाती है। मक्खियां भी इस बीमारी को फैलाने में अपनी भूमिका निभाती हैं। यह हमारे देश की स्वास्थ्य सम्बन्धी एक बड़ी समस्या है यदि हम छोटी–छोटी सी सावधानियां बरतें, साफ–सफाई बनाए रखें, जरूरत पड़ने पर चिकित्सक की सलाह लें और इस तरह बचाव के उपायों पर पूरा–पूरा ध्यान दे तो हम हैजा, अतिसार सरीखे रोगों से बचाव कर सकते हैं। यह सभी रोग पूरी तरह से नियन्त्रित किए जा सकते हैं। आयुर्वेद में उक्त रोगों की रोकथाम हेतु उपाय एवं इनकी चिकित्सा कैसे की जाय का वर्णन मिलता है।

वर्षा ऋतु का साहित्यिक वर्णन व वैज्ञानिक सुझाव

राकेश कुमार प्रजापति (शोध छात्र), डा. नरेन्द्र शंकर त्रिपाठी (सहायक आचार्य)
क्रियाशारीर विभाग, आयुर्वेद संकाय, चिकित्सा विज्ञान संस्थान

भारतवर्ष में ऋतु व्यवस्था पूर्ण वैज्ञानिक है। सूर्य के दक्षिणायन होने पर वर्षा ऋतु का आगमन होता है। ग्रीष्मकाल में गर्म हवाओं और धूप से जो धरती रुखी–सूखी रहती है वही वर्षाकाल में जल की असीम धारा से सराबोर हो कर जीवंत हों जाती है। नये पौधों के रुप में औषधियां भी अंकुरितत हो जाती है।

वर्षा ऐसी ऋतु है जिसका वर्णन कवि, साहित्यकार, वैद्य आदि सभी के द्वारा बड़े गंभीरता के साथ किया जाता है। वर्षा ऋतु आते ही लोगों का हृदय खुशियों से झूम उठता है। जल की बूदों का पान करने को आतुर पंक्षी अपनी चोंच को फैलाये हुए आकाश की ओर घिरे हुए बादलों की घटाओं को देख कर आनंन्दित हो उठते है। कहीं पपीहे की पिऊ–पिऊ, की आवाज विरही जनो की वेदना को बढ़ाता है तो कहीं अपने रंग–बिरंगे, चमकीले पंखो को फैलाये हुए नाचते हुए मयूरो के मनोरम दृश्य रसिकजनों को रास–रंग में रंग जाने को प्रेरित करता है।

वर्षा से जीवन के आशा की डोर जुड़ी हुई है। इसके महत्व को कुछ लोग ही समझ सकते है। वर्षा से पेड़–पौधे विकसित होते है, जंगलों की वृद्धि होती है जिनपर लोगों का जीवन निर्भर है। कहा जाता है कि– 'जीवनम् निहितं वने' जीवन वन में ही निहित होता है। समयानुसार जलवर्षण से अन्न का अच्छा उत्पादन होता है जो भरण–पोषण हेतु लोगों के दैनिक जीवन हेतु अतिआवश्यक है। यदि असामयिक वर्षा हुयी या अधिक हुयी या कम हुयी या न हुयी तो जन–जीवन के लिए संकट पैदा कर देता है। साहित्यिक दृष्टि से देखा जाय तो सम्पूर्ण वर्षा काल दृष्य काव्य की भॉति प्रतीत होता है। जिनमें भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में वर्णित आठों रस वर्षा ऋतु रुपी महाकाव्य की शोभा को द्विगुणित करते है।

वर्षा ऋतु में कहीं, युद्धस्थल में सैनिकों के बीच तलवार की भॉति बिजलियॉ चमक उठती है। युद्ध के बाजे की भॉति बादलों की गड़गड़ाहट ध्वनि पापियों के हृदय को विदीर्ण कर देता है। कहीं काले–काले बादल चारों तरफ से घिर कर भयावहता को प्रकट करतें है। कहीं जलप्लावन से नदियों के किनारे लोग बाढ़ की चपेट में आ जाते है और त्राही–त्राही मच जाती है जिसे देख लोगों का हृदय शोकाकुल हो जाता है।

लोग पीड़ितो को बचाने के कार्य में लग लाते है। कहीं घोर वर्षा अपने रौद्र रुप को धारण कर लेता है। कहीं झिंगुर, दादुर की झंकृत ध्वनि व मयूरों के नृत्य को देखकर रसिक जनों के हृदय में रति का भाव जाग जाता है। कहीं इन्द्रधनुष अपने अद्भुत रंगों से आकाशमंडल को रंगीन बना देता है। कहीं जल से भरे पोखरों में जलमुर्गे का खेल खेलते बच्चे खुशी से लोट–पोट हो रहे हैं। कहीं कीचड़ से सने मार्ग व फैले हुए नालों के गंदे जल से लोगों का मन जुगुप्सा से भर जाता है। वर्षा, बहारों का मौसम है जिसमें धरती और आकाश का मंगल मिलन होता है। आकाश, मानों वर्षा का रुप धारण कर धरती को हरी भरी चादर से सुसज्जित करता है।

वर्षा की मनोरमता का आनंद लेते हुए हमें अपने स्वास्थ्यमय जजीवन की ओर भी ध्यान देने की जरुरत है। कहा जाता है कि 'पहला सुख निरोगी काया' अर्थात शरीर को निरोग रखना यह पहला सुख है। इसका विस्तारित वर्णन आयुर्वेद के ग्रन्थों में प्राप्त होता है, जिसका विकास ऋग्वेद से भी प्राचीन है। औषधियों का विकास तीन युग के पहले से ही है (ऋग्वेद 10/97)। औषधियों के सैकड़ो जन्म क्षेत्र है। कुछ फल वाली और कुछ फूल वाली है। औषधियों का प्रभाव शरीर के अंग अंग और पोर–पोर पर पड़ता है। (अखण्ड ज्योति पत्रिका वर्ष 82, अंक 8) ।

ऋतुओं के अनुसार रोग भी भिन्न–भिन्न प्रकार के उत्पन्न होते है – बसंत ऋतु में कफज, शरद ऋतु में पित्तज, वर्षा ऋतु में वातज रोग प्रायः उत्पन्न हो जाते है। (चरक सूत्र स्थान, अध्याय 6)।

निशान्तेदिवसान्तेच वर्षान्ते वातजा गदाः। (चरक संहिता अध्याय 30)

स्वास्थ्य की बात की जाय तो हमें इस काल में अपने आहार–विहार व दिनचर्या में बदलाव कर देना चाहिए–

1. दिन में नहीं सोना चाहिए।
2. वायु को बढ़ाने वाली चीजों का सेवन कम/नहीं करना चाहिए।
3. अधिक व्यायाम नहीं करना चाहिए।
4. कड़वे व खट्टे फलों का सेवन कम/नहीं करना चाहिए।
5. नदियों तालाबों व पोखरों में स्नान नहीं करना चाहिए।
6. वर्षा के जल में नही भीगना चाहिए।
7. पत्तेदार सब्जियों का सेवन कम/नहीं करना चाहिए।
8. दूषित जल में घुले सत्तू का सेवन नहीं करना चाहिए।
9. जमीन पर नहीं सोना चाहिए।
10. रात्रि जागरण नहीं करना चाहिए।
11. मछलियों का सेवन हानिकारक हो सकता है।
12. बाहर/खुले में पकने वाले भोजन से बचें।
13. बासी भोजन न करें।
14. प्रातः काल जाग जाना चाहिए।
15. कषाय रस वाले फलों का सेवन हितकर है।
16. उबाला हुआ जल सामान्य ताप तक ठण्डा करके पीना चाहिए।
17. सोते समय मच्छरदानी का प्रयोग करें।
18. दिन भर में कमसे कम दस ग्लास पानी जरुर पीयें।
19. ग्रीन टी या काढ़ा का सेवन हितकारी है।
20. मौसमी फलों का सेवन हितकारी है।
21. मधु का सेवन अत्यंत लाभप्रद है।
22. घरों में हानिकारक वैक्टीरिया को समाप्त करने के लिए धूपबत्ती सुलगाएं व गुग्गल का हवन करें।
23. अदरक, गिलोय व तुलसी के पत्ते का काढ़ा पीना स्वास्थ्यप्रद है।
24. स्नान हेतु नीम के पत्ते सहित उबाले हुए जल का प्रयोग हितकर है।
25. स्नान के बाद शरीर को सूखे तौलिये से सुखा लें।

वर्षा ऋतु में गुदरोग

डॉ0 रश्मि गुप्ता, सहायक आचार्य, शल्य तन्त्र विभाग, आयुर्वेद संकाय, आई0एम0एस0

आयुर्वेद में छः ऋतु का वर्णन किया हैं चरक संहिता, सुश्रुत संहिता, अष्टांग संग्रह आदि में छः ऋतुओं का विस्तृत वर्णन मिलता है। तथा किस–किस ऋतु में कौन सा आहार विहार सेवित है और कौन सा आहर विहार वर्जित है, इसका भी विस्तृत वर्णन देखने को मिलता है।

इन छः ऋतुओं में एक वर्षा ऋतु है। यह आदान काल की ऋतु है। वर्षा ऋतु में जठराग्नि मन्द हो जाती है। क्योंकि यह ऋतु आदान काल की अन्तिम ऋतु है। जिसमें मनुष्य का शारीरिक बल क्षीण हो जाता है। बल क्षीण होने से तथा जठराग्नि मन्द होने से मनुष्यों में अपच की प्रवृत्ति हो जाती है।

वर्षा ऋतु में जल का विपाक भी अम्ल हो जाता है। वातावरण में क्लेदता बढ़ जाती है। जिससे मनुष्यों में स्वेद की प्रवृत्ति भी अधिक हो जाती है।

इन सभी कारणों से मनुष्यों में मलबद्धता हो जाती है। मलबद्धता होने से मनुष्यों में परिकर्तिका अर्श आदि गुदजन्य रोगों की सम्भावना बढ़ जाती है।

इसीलिये वर्षा ऋतु में गरिष्ठ आहार, तला भुना भोजन, ठण्डा भोजन रखा हुआ भोजन तथा कच्ची सब्जियों को खाने के लिये निषेध किया गया है। तथा लघु, गर्म, ताजा भोजन तथा कोष्ण जल का प्रयोग करना चाहिये। जो भोजन पचने में सुपाच्य हो उसका सेवना करना चाहिये।

आयुर्वेद संकाय की मासिक उपलब्धियां

1. सामान्य जन एवं दूरस्थ प्रदेशों से आने वाले मरीजों हेतु सर सुंदरलाल चिकित्सालय में संचालित हो रही OPD का समय अब सांयकाल 5 बजे तक सुनिश्चित हुआ जिसका लाभ मरीजों को मिल रहा है।
2. शरीर रचना शारीर विभाग में Research Methodology के संदर्भ में सेमिनार एवं 7 दिवसीय कार्यशाला का आयोजन किया गया जिसमें समग्रदेश से प्रतिभागियों ने भाग लिया।
3. संकाय के सर्वांगीण विकास एवं चिकित्सकीय संकाय सेवा को और उन्नत करने हेतु संकाय प्रमुख ने UGC में आयुर्वेद को विकसित करने के लिये अपनी मांगपत्र को प्रेषित किया। जिसके प्रतिउत्तर में 25 नवीन पोस्ट के सृजन का आदेश UGC से संकाय प्रमुख को प्राप्त हुआ।
4. नाड़ी तरंगिणी आयर्वुदिक नाड़ी परीक्षा, प्रकृति परीक्षा एवं आहार योग हेतु संकाय में सतत् चल रहे वैलनेस सेंटर में उद्घाटन हुआ जो कि स्वस्थ व्यक्तियों की प्रकृति निर्धारण में और शोध में सहायता प्रदान करेगा।
5. आयुर्वेद संकाय में आयुर्वेद के गूढ़ विषयों में विभिन्न परिषदीय संभाषा का आयोजन प्रत्येक शुक्रवार को अनवरत हो रहा है, वर्तमान में वातकलाकलीय एवं महारोगाध्ययाय पर संभाषा की जा रही है जिससे की गूढ़ आयुर्वेद के सूत्रों को जन–जन तक पहुंचाते हुये विश्व पटल की तर्ज पर विस्थापित किया जा सके।
6. आयुर्वेद संकाय से प्रतिमाह प्रकाशित होने वाली स्वास्थ्य समाचार पत्रिका को ISSN प्रमाण पत्र हेतु प्रयास की जा रही है।
7. प्रोफेसर ओम प्रकाश सिंह, कायचिकित्सा विभाग ने विदेश में जाकर आयुर्वेद से होने वाले लाभों की विस्तृत जानकारी दिये।

स्वास्थ्य समाचार पत्रिका, आयुर्वेद संकाय, बी.एच.यू.

नित्य हिताहारविंहारसेवी समीक्ष्यकारी विषयेष्वसक्तः।
दाता समः सत्यपरः क्षमावानाप्तोपसेवी च भवत्यरोगः।।

स्वास्थ्य समाचार पत्रिका, आयुर्वेद, बी.एच.यू.

स्वस्थस्य स्वास्थ्यरक्षणमातुरस्य विकार प्रशमनं च ।।

प्रकाशक
आयुर्वेद संकाय, चिकित्सा विज्ञान संस्थान,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, पिन – 221005